द्वारा

डॉ आशीष सिसोदिया

ध्वनि की उत्पत्ति -

 हारमोनियम या बिगुल आदि वाद्य यन्त्रों की भाँति हम लोग भी वायु की सहायता से बोलते हैं। यह वायु दो प्रकार की होती है - एक तो वह है जो नाम या मुँह के मार्ग से भीतर खींचते हैं। यह बाहर की साफ हवा होती है। इस शुद्ध हवा से हम लोग अधिक ध्वनियाँ उच्चरित नहीं कर पाते हैं। दूसरे प्रकार की हवा वह है जो फेफडे़ को साफ करके निकलती है। वास्तव में देखा जाए तो यह दूसरी हवा, जो पहली का गन्दा रूप मात्र ही संसार की प्रायः सभी भाषाओं के बोलने में हमारी सहायता करती है। पहली हवा श्वाॅस है (जो हम अन्दर लेते हैं ), दूसरी प्रश्वास (जिसे हम छोड़ते हैं ) फेफड़े की सफाई करने के पश्चात वायु/श्वास श्वासनलिका के पथ से बाहर चली जाती है। स्वर यंत्र के पूर्व इसमें किसी भी प्रकार का विकार नहीं होता। सर्वप्रथम हम स्वरतंत्रियों की सहायता से इसे मनमाना रूप देते हैं। उससे आगे चलकर आवश्यकतानुसार नासिका विवर, मुख विवर या दोनों से थोड़ा-थोड़ा निकालते हैं। ऐसा करने में कौवा भी हमारी सहायता करता है। वहाँ से मुख विवर में जाने वाली हवा का आवश्यकतानुसार जिह्वा, कण्ठ, तालु, दाँत, ओष्ठ आदि के सहारे इच्छित रूप देकर बाहर निकालते हैं। जो बाहर आकर ध्वनि की संज्ञा पाती है।

(1) साम्वहनिक ध्वनि विज्ञान - साम्वहनिक या प्रसारणिक ध्वनि विज्ञान इसमें उच्चारण के फलस्वरूप बनने वाली ध्वनि लहरों का अध्ययन होता है। भौतिकी में इसे ध्वनि विज्ञान कहते हैं। भोलानाथ तिवारी के अनुसार ’’इसके अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि कैसे ध्वनि लहरों द्वारा वक्ता के मुँह से श्रोता के कान तक ले जाई जाती है। ऐसा होता है कि फेफड़े से चली हवा ध्वनि यंत्रों की सक्रियता के कारण आन्दोलित होकर निकलती है और बाहर की वायु में अपने आन्दोलन के अनुसार एक विशिष्ट प्रकार के कम्पन्न से लहरें पैदा कर देती हैं। ये लहरें ही सुनने वाले के कान तक पहुँचती हैं और वहाँ श्रवणेन्द्रियों में कम्पन्न पैदा कर देती हैं।

(2) श्रावणिक ध्वनि विज्ञान -इसमें ध्वनियों के सुने जाने का अध्ययन होता है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए संक्षेप में कान की बनावट को देख लेना होगा। हमारा कान तीन भागों में बँटा है - (प) बाह्य कर्ण (पप) मध्यवर्ती कर्ण (पपप) आभ्यन्तर कर्ण।

बाह्यकर्ण के दो भाग हैं - एक तो वह भाग जो ऊपर टेढ़ा-मेढ़ा आरंभ होकर भीतर तक चला जाता है। इस भाग की लम्बाई एक इंच होती है। नलिका के भीतरी छिद्र पर एक झिल्ली होती है जो बाह्य कर्ण को मध्यवर्ती कर्ण से जोड़ती है। मध्यवर्ती कर्ण एक छोटी-सी कोठरी होती है। इसमें तीन छोटी-छोटी अस्थियाँ होती हैं। इन अस्थियों का एक सिरा बाह्य कर्ण की झिल्ली से जुड़ा रहता है और दूसरी ओर इसका संबंध आभ्यन्तर कर्ण के बाहरी छिद्र से होता है। इसके पीछे आभ्यन्तर कर्ण आरंभ होता है। इस भाग में शंख के आकार का एक अस्थि समूह होता है। इसके खोखले भाग में उसी आकार की झिल्लियाँ होती हैं। इन दोनों के बीच में एक प्रकार का द्रव पदार्थ भरा रहता है। इस भाग के भीतरी सिरे की झिल्ली से श्रावणी शिरा के तंतु आरंभ होते हैं, जो मस्तिष्क से सम्बद्ध रहते हैं। ध्वनि की लहरें जब कान में पहुँचती हैं तो बाह्य कर्ण की भीतरी झिल्ली (कान का पर्दा / कर्ण पटल) पर कम्पन्न उत्पन्न करती है। इस कम्पन्न का प्रभाव मध्यवर्ती कर्ण की अस्थियों द्वारा भीतरी कर्ण के द्रव पर पड़ता है और उसमें लहरें उठती हैं। जिसकी सूचना श्रावणी षिरा के तंतुओं द्वारा मस्तिष्क में जाती है और हम सुन लेते हैं।

ध्वनि क्या है?

भाषा-ध्वनि भाषा में प्रयुक्त ध्वनि की वह लघुतम इकाई है, जिसका उच्चारण और श्रोतव्यता की दृष्टि से स्वतंत्र व्यक्तित्व होता हो। संक्षेप में, भाषा में प्रयुक्त ध्वनि ही भाषा-ध्वनि है।